भारतीय परम्परा में योग का महत्त्व

डॉ. सोनल सिंह

योग शब्द 'युज्' धातु से निष्पन्न है जिसका अर्थ है- जोड़ना अर्थात् जो युक्त करे या मिलाव करे उसे योग कहते हैं। **'युञ्जते मन युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः ।** वाजपेय संहिता में एक ऋषि का प्रसंग आता है जिसमें वह योग की महत्ता को प्रतिपादित करते हुए कहते हैं कि- **" चित्तिं जुहोमि मनसा घृतेन यथा देवा इहागमन्नीतिहोत्रा ऋतावृधः पत्ये विश्वस्य भूमनो जुहोमि विश्वकर्मणे विश्वाहाऽदाभ्य हविः ।।'"** (अर्थात् मैं मनरूपी घृत से चेतनारूपी अग्नि में होम करता हूँ जिससे सत्य को संवर्धित करने वाली प्रकाशमयी दैवी शक्तियों का अवतरण हो सके। यहाँ घृत शब्द मानसिक निर्मलता और प्रकाश का द्योतक है।) योग-साधना से व्यक्ति के जीवन में सक्रियता का संचार होता है तथा निष्क्रियता समाप्त हो जाती है, यह योग सम्पूर्ण परिवार में मर्यादित आनंद की धारा को प्रवाहित करता है। अथर्ववेद में भी प्राप्त है कि - **आनंदा मोदाः प्रमुदोऽभी मोदमुदश्च ये हसो वरिष्टा वृत्तानि शरीरमनुप्राविशन्। आलापाश्च प्रलापाश्चाभीलापलपश्च ये शरीर सर्वे प्राविशन्नायुजः प्रयुजो युजः ।**

इस प्रकार योग शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक कल्याण प्रणाली है जिससे मानव का सम्पूर्ण जीवन प्रभावित होता है। इस योग की चर्चा सिंधु घाटी सभ्यता के पहले से उत्पन्न हुई मानी जाती है। इस तथ्य की पुष्टि भारतीय उप महाद्वीप पर पुरातात्विक खोजों से हुई है और इसके अतिरिक्त भारतीय साहित्य में इस विषय पर लिखे हुए ग्रंथों की एक अपनी अनूठी परंपरा है, जिसमें योग के भौतिक, व्यावहारिक, तात्विक और आध्यात्मिक पहलुओं पर चर्चा की गई है। इसके अतिरिक्त, नृत्य और नाट्य कलाओं में योग क्रियाओं के विभिन्न आसन, व्यायाम सम्मिलित हैं। मूल रूप से योग व्यक्तिगत, शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक कल्याण के लिए केंद्रित है। वहीं भारतीय परम्परा में आत्मज्ञान को मुख्य माना जाता है। सभी धर्म - दर्शनों में यह बतलाया गया है कि आत्मज्ञान के बिना ब्रह्मज्ञान संभव नहीं है। और ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति योग, ज्ञान और भक्ति से ही हो सकती है। योग इसी आत्मतत्व को ओर ले जाने वाला मार्ग है। भारतीय दर्शन में प्रकृति सत्, रज और तम गुणों से युक्त होती है। व्यक्ति इन्हीं गुणों के वशीभूत होकर कार्य करता है और योग का मार्ग इन बंधनों से मुक्ति दिलाने का मार्ग है।

भारतीय दर्शनों में योग दर्शन एक प्रमुख दर्शन के रूप में भी है। महर्षि पतंजलि का योगसूत्र व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक एवं नैतिक उन्नयन में सहायक है। योगशास्त्र भारतीय चिंतन परंपरा का अत्यन्त प्राचीनतम दर्शन है। छह दर्शनों में योग प्रमुख दर्शन है। योगसूत्र के भाष्य से लेकर श्रीमद्भगवद्गीता के छठें अध्याय तक में योगशास्त्र का उल्लेख है। श्रीमद्भगवद्गीता में योग की महत्ता को समझाते हुए श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि हे अर्जुन! योगी बनो-

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः ।

कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन ।' श्रीमद्भगवद्गीता, 6/46

वस्तुतः भारतीय परंपरा में योग से विद्या एवं साधना की दो धाराएँ प्रवाहित हुई।
1-सैद्धान्तिक धारा- महर्षि पतंजलि द्वारा प्रवर्तित योगदर्शन की धारा। तथा
2-क्रियात्मक धारा। महायोगी गोरखनाथ जी द्वारा प्रतिष्ठापित हठयोग विद्या की धारा।

महर्षि पतंजलि द्वारा प्रवर्तित योगदर्शन सैद्धांतिक पक्ष को समाज के समक्ष रखते हुये योगशास्त्र की सत्ता को अक्षुण्ण बनाये रखा वहीं महायोगी गोरखनाथ जी द्वारा इसके व्यावहारिक स्वरूप तथा साधना को समाज के समक्ष रखा गया। वे कहीं भी एक-दूसरे का खंडन मंडन नहीं करतीं। जब पातंजल योग ऋषियों-मुनियों-तपस्वियों के आश्रमों तक सीमित हो गया, तब सामान्य जन के लिए पातंजल योग कठिन हो गया था, ऐसे में महायोगी गोरखनाथ जी ने योगियों सहित जन-सामान्य के द्वार तक योग को पहुँचाया। योग भारतीय चिंतन परंपरा की अमूल्य निधि है। समस्त भारतीय धर्म-दर्शन एवं उपासना के विधि-विधानों में योग का महत्त्व स्वीकार्य है कहा जाता है कि योग के द्वारा सभी सिद्धियाँ, समस्त फल एवं भगवान् को प्राप्त कर सकते हैं, किंतु यज्ञ- दान आदि के द्वारा योगजनित सिद्धियाँ कभी नहीं प्राप्त की जा सकतीं। भगवान् शिव के साथ-साथ कृष्ण भी योगेश्वर कहे जाते हैं। धर्म-दर्शन एवं उपासना के विधि-विधानों में योग का महत्त्व स्वीकार्य है।

यही कारण है कि वेद, उपनिषद्, गीता के साथ-साथ न्याय-वैशेषिक, सांख्य योग तथा मीमांसा वेदांत जैसे आस्तिक षड्दर्शनों में भी इसकी पूर्ण स्वीकृति है। बौद्ध और जैन जैसे नास्तिक दर्शनों भी योग की महत्ता को स्वीकार किये बिना नहीं रह सके। आधुनिक चिंतक व दार्शनिक विवेकानंद व अरविंद ने भी योग की महत्ता को स्वीकार किया है। दार्शनिक ओशो ने योग के महत्त्व पर विस्तार से प्रकाश डाला है। अतः हम कह सकते हैं कि हमारे आस-पास सुदूर अतीत से चली आती हुई योग की अति समृद्ध परंपरा रही है। ऋग्वेद संहिता एवं वाजपेय संहिता में कहा गया है कि एक प्रबुद्ध योग-साधक अपने मन और बुद्धि को यौगिक क्रियाओं के माध्यम से परमतत्त्व के संधान में लगाते हैं- उसी प्रकार नाथ सम्प्रदाय में गोरखनाथ जी द्वारा प्रतिपादित योग की महत्ता का दर्शन सम्पूर्ण रूप से करते हैं। गोरखनाथजी व्यक्ति को योग साधना के महत्त्व पर उपदेश देते हुए कहते हैं-

हसिबा षेलिबा रहिबा रंग। कांम क्रोध न करिबा संग ।।
हसिबा षेलिबा गाइबा गीत दिढ़ करि राषि आपनां चीत।।
हसिबा षेलिबा धरिबा ध्यांन। अहनिसि कथिषा ब्रह्म गियांन।
हसै षेले न करै मन भंग। ते निहचल सदा नाथ के संग ।।

मन को लौकिक विषयों में खो जाने तथा इधर-उधर भटकाव से बचाकर एवं सुस्थिर करके साधक जब मन के प्रभाव से मुक्त हो जाता है तो वह परमतत्त्व का अनुभव करता है यही परमानंद है। अतीत से लेकर वर्तमान तक योग की महिमा में अभिवृद्धि होती रही है। योग की अवधारणा एवं उसके क्रियात्मक पहलुओं में परिवर्तन और परिवर्धन के अनेक रूप समाहित हुए हैं लेकिन आज भी इस मान्यता से शायद ही कोई योग-मर्मज्ञ असहमत हो कि जब तक मनुष्य की आंतरिक मनोदशा की जटिलताओं का समाधान नहीं हो जाता तब तक वह पूर्ण

रूप से संतुष्ट, शांत, तृप्त नहीं हो पाता है। भारतीय चिंतकों ने कठिन तपस्या एवं शोध करके मानव के अंतर्जगत् की इन समस्याओं का समाधान प्रस्तुत किया है, जिसका नाम योग है। भारतीय परम्परा में योग का महत्त्व सिर्फ भारत में ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व में फैलकर अपने गरिमा को बनाये रखा है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतीय चिंतन परंपरा का प्रमुख लक्ष्य है मनुष्य को सांसारिक बंधनों से दूर कर मोक्ष की ओर अग्रसर करना। मोक्ष एक ऐसी अवस्था मानी गई है जहाँ मनुष्य स्थायी रूप से सभी सुख-दुःख से मुक्त हो असीम आनंद की अनुभूति में डूब जाता है। योग इसी असीम आनंद की अनुभूति तक ले जाने वाली प्रक्रिया है।

सहायक निदेशिका
महायोगी गुरु श्रीगोरक्षनाथ शोधपीठ
दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर
ईमेल-drsonal.singh088@gmail.com
मो.8299829806